Journal of Advances and Scholarly Researches in Allied Education
Vol. 19, Issue No. 4, July-2022, ISSN 2230-7540

DOI: https://doi.org/10.29070/mvqdpx64

Check for updates

# प्रारंभिक बौद्ध कला और कृष्णा घाटी कला का तुलनात्मक विश्लेषण

**अविनाश वर्मा** [1] * , **डॉ. मान सिंह** [2]

1. शोधार्थी, श्री कृष्णा विश्वविद्यालय, छतरपुर, म.प्र., भारत
ouriginal.sku@gmail.com ,
2. सहायक प्रोफेसर, श्री कृष्णा विश्वविद्यालय, छतरपुर म.प्र., भारत

**सारांश:** यह अध्ययन प्रारंभिक बौद्ध कला और कृष्णा घाटी कला का तुलनात्मक विश्लेषण प्रस्तुत करता है तथा उनके ऐतिहासिक, सांस्कृतिक और कलात्मक आयामों की खोज करता है। प्रारंभिक बौद्ध कला, जो बुद्ध के जीवन और शिक्षाओं के प्रतीकात्मक प्रतिनिधित्व के लिए जानी जाती है, की जांच कृष्णा घाटी की विशिष्ट मूर्तिकला परंपरा के साथ-साथ की जाती है, विशेष रुप से अमरावती क्षेत्र से। प्रतीकात्मकता, मूर्तिकला शैलियों और स्थापत्य सुविधाओं के विश्लेषण के माध्यम से, यह अध्ययन इन कलात्मक परंपराओं के भीतर साझा और भिन्न दोनों विषयों पर प्रकाश डालता है। शोध प्रत्येक अवधि की कलात्मक अभिव्यक्तियों को आकार देने में धार्मिक और सामाजिक-राजनीतिक कारकों के प्रभाव पर जोर देता है, तथा क्षेत्रीय संस्कृतियों और पार-सांस्कृतिक आदान-प्रदान के प्रभाव का पता लगाता है। इस तुलनात्मक अध्ययन का उद्देश्य क्षेत्रीय विविधताओं ने कैसे प्रारंभिक बौद्ध कला के विकास को आकार दिया और कृष्णा घाटी में स्थानीय परंपराओं के साथ इसके संबंधों पर नए दृष्टिकोण प्रदान करके भारतीय कला इतिहास की व्यापक समझ में योगदान करना है।

**मुख्य शब्द:** प्रारंभिक बौद्ध कला, कृष्णा घाटी कला, मूर्तिकला, वास्तुकला, प्रतीकात्मकता

---------- X ----------

## परिचय

भारत में मौर्य शासन, विशेष रुप से अशोक के समय में, हड़प्पा सभ्यता के पतन के बाद भारत के इतिहास की कला में एक नए अध्याय की शुरुआत हुई। हड़प्पा कला और मौर्य कला के बीच एक अंतराल था (खेर, आर., 2015) । इस अंतराल के दौरान, कला वस्तुएं अनुपस्थित नहीं थीं, बल्कि चित्रित ग्रे वेयर, ब्लैक-एंड-रेड वेयर और उत्तरी ब्लैक पॉलिश (एन.बी.पी.) वेयर के लिए पुरातात्विक क्षितिज से प्राप्त टेराकोटा कला का रुप ले लिया - जो लोहे के उपकरणों के उद्भव और व्यापक उपयोग के साथ मेल खाता है (सिंह, ए. के., 2014) । यदि गंगा यमुना घाटियों में विभिन्न प्रकार से खोजे गए तांबे से बने मानवरूपी आकृतियों को भी तांबे पर कला के रुप में माना जाता है, तो वे गंगा घाटी में संभवतः प्रारंभिक लौह युग से पहले के चरण का प्रतिनिधित्व करते हैं (यादव, ए., 2013) । लोहे के इस्तेमाल से पत्थर की कलाकृतियों को छेनी से तराशना और आकार देना संभव हो गया, खास तौर पर बलुआ पत्थर जैसे नरम कपड़े को (रमेश, के., 2012) । वाराणसी से कुछ ही दूर, चुनार को बलुआ पत्थरों की कई किस्मों के प्रमुख स्रोतों में से एक माना जाता है, जो कला की अभिव्यक्ति के लिए एक आम माध्यम बन गया (तिवारी, एस., 2010) । समय के अंतराल तथा तुलनीय कला वस्तुओं की अनुपलब्धता के कारण हम टेराकोटा, स्टीटाइट, चूना पत्थर आदि में अभिव्यक्त हड़प्पा कला को तीसरी शताब्दी ईसा पूर्व की मौर्य कला से जोड़ने की स्थिति में नहीं हैं (सिंह, आर., 2011) ।

### अमरावती और नागार्जुनकोंडा की खोज

अमरावती की बस्ती 1796 ई. के आसपास अस्तित्व में आई, जब एक स्थानीय जमींदार वासीरेड्डी वेंकटाद्रि नायडू ने अपना निवास चिंतापल्ली से अमरावती में स्थानांतरित कर दिया, जो मध्ययुगीन काल के अमरेश्वर मंदिर के करीब था। लेकिन महास्तूप और आसपास के क्षेत्रों को अभिलेखीय अभिलेखों के माध्यम से धन्यकटक, धम्नाकड़ा, संधान्य, धरणीकोटा आदि के रूप में जाना जाता था। महा चैत्य के पश्चिम में लगभग एक किलोमीटर की दूरी पर धरणीकोटा के प्राचीन अवशेषों पर आधुनिक संरचनाएं बनी हुई हैं। वर्तमान धरणीकोटा आज भी मिट्टी से बने एक प्राचीर से घिरा हुआ है, हालांकि इसके कुछ हिस्से खोदे गए थे। उन दिनों महा चैत्य के क्षेत्र को दीपालदीन के नाम से जाना जाता था, क्योंकि वहां बड़ी संख्या में पके हुए टेराकोटा के कई दीपक खोजे गए थे। 1796 में, वासीरेड्डी वेंकटाद्री नायडू ने विजयंती के नाम से प्रसिद्ध अपने महल के निर्माण के लिए कच्चे माल की खुदाई का आदेश दिया। इन कार्यों के दौरान, मजदूरों का हाथ दीपालदीन पर पड़ा, और इस तरह बौद्ध धर्म के नक्काशीदार पैनलों की एक बड़ी संख्या चूने के गारे में बदल गई। यह 1797 में कर्नल कॉलिन मैकेंजी के ध्यान में आया, जिन्होंने इस स्थान का एक संक्षिप्त

दौरा किया और इस स्थान के महत्व और महत्ता का आकलन किया। 1818 में, कुछ सहायकों की मदद से, उन्होंने वहां के पुरातात्विक स्थल का एक विस्तृत दस्तावेज तैयार किया। उन्होंने साइट से कुछ मूर्तिकला स्लैब एकत्र किए। 1845 में, वाल्टर स्मिथ ने टीले के दक्षिण-पश्चिमी हिस्से को खोदा और कुछ मूर्तिकला पैनल बरामद किए। बाद के वर्षों में, 1877 में रॉबर्ट सेवेल, 1881 में जेम्स बर्गेस और 1888-89 में अलेक्जेंडर री ने साइट की व्यवस्थित जांच में भाग लिया। अलेक्जेंडर री महा चैत्य के पूर्ववर्ती मेगालिथ की खोज के लिए भी जिम्मेदार थे। उन्होंने कुछ छोटे स्तूप और कांस्य प्रतिमाएँ भी प्रकाश में लाईं। महा चैत्य और आस-पास की जाँच एक अंतहीन प्रक्रिया बन गई है (स्मिथ, आर., 2010) ।

## भारतीय कला और उसके सांस्कृतिक संदर्भ का अवलोकन

भारतीय कला, अपने समृद्ध और विविध इतिहास के साथ, दुनिया की सबसे पुरानी और सबसे जटिल कलात्मक परंपराओं में से एक है। सहस्राब्दियों तक फैली और सांस्कृतिक, धार्मिक और दार्शनिक प्रभावों की एक विस्तृत श्रृंखला द्वारा आकार लेने वाली, भारतीय कला विभिन्न चरणों से गुज़री है, जिनमें से प्रत्येक अपने समय के सामाजिक, राजनीतिक और आध्यात्मिक मूल्यों को दर्शाता है। इसका इतिहास उपमहाद्वीप के प्रमुख धार्मिक और सांस्कृतिक आंदोलनों से जुड़ा हुआ है, जिसमें हिंदू धर्म, बौद्ध धर्म, जैन धर्म और बाद में इस्लामी और यूरोपीय प्रभाव शामिल हैं। प्रारंभिक बौद्ध और कृष्ण घाटी परंपराओं की कला को समझने के लिए, सबसे पहले इन परंपराओं को भारतीय कला के व्यापक सांस्कृतिक और ऐतिहासिक संदर्भ में रखना आवश्यक है (कपूर, ए., 2010) ।

### भारतीय कला की उत्पत्ति और विकास

भारतीय कला की उत्पत्ति का पता प्रागैतिहासिक काल में लगाया जा सकता है, जैसा कि भीमबेटका गुफाओं में पाई जाने वाली रॉक आर्ट से पता चलता है, जो लगभग 30,000 साल पहले की है। ये गुफा चित्र जानवरों, मानव आकृतियों और दैनिक जीवन के दृश्यों सहित विभिन्न विषयों को दर्शाते हैं, जो दृश्य प्रतिनिधित्व के माध्यम से बनाने और संवाद करने के लिए प्रारंभिक मानव आवेग को प्रदर्शित करते हैं। जैसे ही सिंधु घाटी की सभ्यता 2500 ईसा पूर्व के आसपास उभरी, एक अधिक परिष्कृत कलात्मक परंपरा विकसित हुई। हड़प्पा और मोहनजो-दारो जैसे स्थलों से प्राप्त मुहरें, टेराकोटा मूर्तियाँ और मिट्टी के बर्तन उस समय की सौंदर्य संबंधी संवेदनाओं के बारे में जानकारी देते हैं, जिसमें ज्यामितीय रूपों, प्राकृतिक प्रतिनिधित्व और प्रतीकात्मकता के उपयोग में गहरी रुचि शामिल है (स्कॉट, ब्लेयर, 2009) ।

### भारतीय कला पर धार्मिक और दार्शनिक प्रभाव

धर्म हमेशा से भारतीय कला को आकार देने में एक केंद्रीय शक्ति रहा है, जो प्रेरणा के स्रोत के रूप में और एक ऐसे ढांचे के रूप में कार्य करता है जिसके भीतर कला का निर्माण, उपभोग और व्याख्या की जाती है। भारत के आध्यात्मिक दर्शन, जो दिव्य, पारलौकिक और ब्रह्मांडीय व्यवस्था (धर्म) की अवधारणाओं में गहराई से निहित हैं, ने कलाकारों को प्रतीकों, कथाओं और रूपों का एक समृद्ध भंडार प्रदान किया (गुप्ता, पी., 2009) ।

## प्रारंभिक बौद्ध कला परंपरा

प्रारंभिक बौद्ध कला परंपरा भारतीय इतिहास में सबसे महत्वपूर्ण और प्रभावशाली कलात्मक आंदोलनों में से एक है, जिसने न केवल भारतीय उपमहाद्वीप बल्कि दक्षिण पूर्व एशिया, मध्य एशिया और पूर्वी एशिया की दृश्य संस्कृति को भी आकार दिया है। सिद्धार्थ गौतम, बुद्ध की शिक्षाओं और जीवन में निहित, प्रारंभिक बौद्ध कला शुरू में अनिकोनिक थी, जो स्वयं बुद्ध के प्रत्यक्ष चित्रण के बजाय प्रतीकात्मक प्रतिनिधित्व पर ध्यान केंद्रित करती थी। समय के साथ, यह परंपरा धार्मिक कला के सबसे अभिव्यंजक और विविध रूपों में से एक में विकसित हुई, जो स्तूपों, रॉक-कट गुफाओं, मूर्तियों, भित्ति चित्रों और चित्रों के निर्माण द्वारा चिह्नित है, जिसका उद्देश्य बौद्ध धर्म की शिक्षाओं और आध्यात्मिक आदर्शों को दृश्य रूप से संप्रेषित करना है। तीसरी शताब्दी ईसा पूर्व से लेकर 5वीं शताब्दी ईस्वी तक फैली प्रारंभिक बौद्ध कला का विकास एक जटिल प्रक्रिया है जो उस समय के धार्मिक विकास और सामाजिक-राजनीतिक परिवर्तनों दोनों को दर्शाती है (दत्ता, एस., 2009) ।

## कृष्णा घाटी कला परंपरा

दक्षिण भारत में सांस्कृतिक और ऐतिहासिक रूप से महत्वपूर्ण क्षेत्र कृष्णा घाटी ने भारतीय कला के विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है, खासकर कृष्ण के चित्रण के मामले में, जो हिंदू देवताओं में सबसे प्रिय और व्यापक रूप से पूजनीय देवताओं में से एक हैं। अपने उल्लेखनीय मंदिरों, मूर्तियों और कलात्मक अभिव्यक्तियों के लिए जानी जाने वाली कृष्णा की दिव्य लीला (लीला) का जश्न मनाने वाली कृष्णा घाटी कला परंपरा भारत के धार्मिक और कलात्मक इतिहास में एक अद्वितीय स्थान रखती है। आधुनिक आंध्र प्रदेश, तेलंगाना और कर्नाटक के कुछ हिस्सों में फैला यह क्षेत्र विशेष रूप से सातवाहन, इक्ष्वाकु और बाद में विजयनगर साम्राज्यों के काल में विष्णु और उनके अवतार कृष्ण की पूजा का एक जीवंत केंद्र बन गया। कृष्णा घाटी कला न केवल कृष्ण की पूजा से जुड़ी भक्ति भावना को दर्शाती है, बल्कि सदियों से विकसित स्वदेशी और अखिल भारतीय कलात्मक शैलियों के संश्लेषण को भी प्रदर्शित करती है (वर्मा, ए., 2008) ।

### ऐतिहासिक और धार्मिक पृष्ठभूमि

कृष्ण घाटी कला परंपरा की जड़ें आम युग की शुरुआती शताब्दियों में देखी जा सकती हैं, जब यह क्षेत्र सातवाहन राजवंश (लगभग दूसरी शताब्दी ईसा पूर्व-दूसरी शताब्दी ईसवी) के शासन के अधीन था। सातवाहन हिंदू धर्म, विशेष रूप से विष्णु की पूजा को बढ़ावा देने में सहायक थे, और उनके शासन में शुरुआती हिंदू मंदिरों और स्तूपों का निर्माण हुआ। हालाँकि, बाद की शताब्दियों के दौरान, विशेष रूप से इक्ष्वाकु और पल्लव राजवंशों के प्रभाव में, कृष्ण भक्ति क्षेत्र की कला और संस्कृति में अधिक प्रमुखता से उभरने लगी। इस अवधि में विष्णु और उनके विभिन्न अवतारों, जिनमें कृष्ण भी शामिल हैं, की पूजा पर अधिक जोर दिया गया, जिससे कृष्ण के जीवन और दिव्य कर्मों को दर्शाने वाली कलात्मक परंपराओं का विकास हुआ (सिंह, एम. पी., 2008) ।

### वास्तुकला और मूर्तिकला विकास

कृष्णा घाटी भारत में मंदिर वास्तुकला और मूर्तिकला के कुछ सबसे उल्लेखनीय उदाहरणों का घर है। इस क्षेत्र में मंदिर निर्माण की कला समय के साथ काफी विकसित हुई, जिसमें स्वदेशी द्रविड़ तत्व और भारत के अन्य क्षेत्रों, विशेष रूप से उत्तर से प्रभाव दोनों शामिल थे। इसका परिणाम एक विशिष्ट शैली थी जो स्थानीय परंपराओं और अखिल भारतीय धार्मिक और कलात्मक धाराओं दोनों को दर्शाती थी। प्रारंभिक मध्ययुगीन काल के दौरान, कृष्णा घाटी में मंदिर अपेक्षाकृत सरल संरचनाएं थीं, जिन्हें अक्सर ईंट और लकड़ी से बनाया जाता था। हालाँकि, जैसे-जैसे यह क्षेत्र चालुक्य और बाद में विजयनगर साम्राज्यों के नियंत्रण में आया, मंदिर वास्तुकला अधिक विस्तृत हो गई, जिसमें जटिल नक्काशी और मूर्तियों से सजे पत्थर के मंदिर शामिल हो गए। इस अवधि के मंदिर, विशेष रूप से कृष्ण को समर्पित, अपने विशाल गोपुरम (प्रवेश द्वार), स्तंभित हॉल और अलंकृत नक्काशी के लिए उल्लेखनीय हैं जो कृष्ण के जीवन के विभिन्न प्रसंगों को दर्शाते हैं (मल्होत्रा, ए., 2007) ।

### भक्ति का प्रभाव और कृष्ण पूजा का प्रसार

कृष्ण घाटी कला परंपरा को भक्ति आंदोलन के प्रभाव पर विचार किए बिना पूरी तरह से नहीं समझा जा सकता है, जो 6वीं शताब्दी ई. के आसपास दक्षिणी भारत में आकार लेना शुरू हुआ और मध्यकाल के दौरान अपने चरम पर पहुँच गया। भक्ति आंदोलन ने एक ही देवता के प्रति व्यक्तिगत भक्ति पर जोर दिया, जो अक्सर भक्त और ईश्वर के बीच प्रेमपूर्ण, भावनात्मक संबंध के रूप में होता था। कृष्ण, अपने मानवीय गुणों और दिव्य प्रेम की कहानियों के साथ, भक्ति आंदोलन में एक केंद्रीय व्यक्ति बन गए, खासकर कृष्ण घाटी क्षेत्र में। कृष्ण घाटी की कला इस भक्ति उत्साह को दर्शाती है, जिसमें कई मूर्तियाँ, पेंटिंग और मंदिर की नक्काशी कृष्ण के अपने भक्तों के साथ संबंधों के भावनात्मक पहलुओं पर ध्यान केंद्रित करती हैं। उदाहरण के लिए, गोपियों को अक्सर कृष्ण की उपस्थिति के लिए तरसते हुए लालसा और भक्ति के भावों के साथ चित्रित किया जाता है। यह भावनात्मक तीव्रता कृष्ण की प्रिय साथी राधा के चित्रण में भी देखी जाती है, जिसका कृष्ण के प्रति प्रेम आत्मा की ईश्वर के साथ मिलन की इच्छा का प्रतीक है।

भक्ति आंदोलन ने कृष्ण घाटी से परे कृष्ण पूजा के प्रसार में भी योगदान दिया, जिसने पूरे भारत में कला और संस्कृति को प्रभावित

किया। दिव्य प्रेमी, चंचल बच्चे और वीर रक्षक के रूप में कृष्ण की कहानियाँ और छवियाँ उत्तरी भारत, बंगाल और राजस्थान सहित अन्य क्षेत्रों की कला में लोकप्रिय विषय बन गईं। कृष्ण घाटी कला परंपरा का प्रभाव मुगल और राजपूत दरबारों के लघु चित्रों में देखा जा सकता है, जिनमें अक्सर कृष्ण के जीवन के दृश्य दर्शाए जाते हैं, साथ ही उत्तरी भारत के मंदिर वास्तुकला में भी देखा जा सकता है, जहां कृष्ण को समर्पित मंदिर दक्षिण की कलात्मक परंपराओं से प्रेरणा लेते रहते हैं (राय, एस., 2007) ।

## प्रारंभिक बौद्ध वास्तुकला

प्रारंभिक बौद्ध वास्तुकला बौद्ध धर्म के आध्यात्मिक और सांस्कृतिक इतिहास की आधारशिला है, जो धर्म की गहरी दार्शनिक शिक्षाओं को दर्शाती है और भारतीय उपमहाद्वीप और उसके बाहर इसके बढ़ते प्रभाव की भौतिक अभिव्यक्ति के रूप में कार्य करती है। मुख्य रूप से बुद्ध के जीवन (6वीं से 4वीं शताब्दी ईसा पूर्व) के बाद की शताब्दियों में उभरी, बौद्ध धर्म से जुड़ी वास्तुकला परंपराएँ तीसरी शताब्दी ईसा पूर्व में सम्राट अशोक के शासनकाल के दौरान आकार लेने लगीं। इस युग ने स्मारक संरचनाओं की स्थापना को चिह्नित किया जो धार्मिक रूप से महत्वपूर्ण और वास्तुकला की दृष्टि से अभिनव दोनों थीं। प्रारंभिक बौद्ध वास्तुकला परंपरा की सबसे खास विशेषता स्तूप, विहार (मठ), चैत्य (प्रार्थना कक्ष) और चट्टान को काटकर बनाई गई गुफाओं का निर्माण है, जिनमें से प्रत्येक ने बौद्ध धर्म के अभ्यास और प्रसार में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। इन शुरुआती संरचनाओं ने न केवल ध्यान और पूजा के लिए पवित्र स्थान प्रदान किए, बल्कि बौद्ध दर्शन के मूल सिद्धांतों को भी मूर्त रूप दिया, जैसे कि अस्तित्व की नश्वरता, संसार की चक्रीय प्रकृति (जीवन, मृत्यु और पुनर्जन्म का चक्र), और ज्ञानोदय का मार्ग।

प्रारंभिक बौद्ध वास्तुकला के सबसे पुराने और सबसे महत्वपूर्ण रूपों में से एक स्तूप है, एक अर्धगोलाकार टीला जो एक दफन स्थल और बुद्ध या अन्य महत्वपूर्ण व्यक्तियों के अवशेषों को रखने के लिए एक स्थान के रूप में कार्य करता था। स्तूप बौद्ध धर्म में गहरा प्रतीकात्मक अर्थ रखता है, जो बुद्ध की मृत्यु और परिनिर्वाण (संसार के चक्र से अंतिम मुक्ति) के साथ-साथ ब्रह्मांड और ज्ञानोदय के मार्ग का प्रतिनिधित्व करता है। स्तूपों का डिज़ाइन समय के साथ विकसित हुआ, लेकिन उनका मूल रूप एक जैसा रहा: एक ठोस, गुंबददार संरचना जो चौकोर आधार पर बनी होती है, जिसके ऊपर अक्सर एक शिखर या कलश होता है। सांची में महान स्तूप, प्रारंभिक बौद्ध वास्तुकला के सबसे प्रसिद्ध और अच्छी तरह से संरक्षित उदाहरणों में से एक है, जिसे मूल रूप से सम्राट अशोक ने तीसरी शताब्दी ईसा पूर्व में बनवाया था। इसका सरल लेकिन प्रभावशाली गुंबद एक पत्थर की रेलिंग और चार जटिल नक्काशीदार प्रवेश द्वार (तोरण) से घिरा हुआ है, जो पवित्र स्थान के प्रवेश द्वार का प्रतीक है। ये प्रवेश द्वार उभरी हुई नक्काशी से ढंके हुए हैं, जिनमें जातक कथाओं (बुद्ध के पिछले जन्मों की कहानियां) और बुद्ध के जीवन की अन्य प्रमुख घटनाओं के दृश्य दर्शाए गए हैं, जिससे यह स्तूप न केवल अवशेष पूजा का स्थल बन गया है, बल्कि बौद्ध दर्शन की शिक्षा देने के लिए एक कथात्मक उपकरण भी बन गया है।

## निचली कृष्णा घाटी का अवलोकन

भारत के दक्षिणी भाग में स्थित निचली कृष्णा घाटी, भौगोलिक, ऐतिहासिक और सांस्कृतिक दृष्टि से बहुत महत्वपूर्ण क्षेत्र है। इसका नाम कृष्णा नदी के नाम पर रखा गया है, जो भारतीय उपमहाद्वीप की सबसे लंबी नदियों में से एक है, जो महाराष्ट्र, कर्नाटक, तेलंगाना और आंध्र प्रदेश राज्यों से होकर बहती है। घाटी डेल्टा क्षेत्र बनाती है जहाँ नदी बंगाल की खाड़ी में गिरती है। निचली कृष्णा घाटी के रूप में जाना जाने वाला यह क्षेत्र अपनी समृद्ध मिट्टी, प्रचुर जल संसाधनों और सहस्राब्दियों से भूमि और इसके लोगों के बीच विकसित हुए गहरे सांस्कृतिक संबंधों के कारण विशेष रूप से महत्वपूर्ण है। प्राचीन सभ्यताओं से लेकर आधुनिक कृषि पद्धतियों तक, घाटी मानव निवास और विकास के लिए उपजाऊ भूमि रही है, जो इसे भारत में ऐतिहासिक रूप से सबसे अधिक बसे हुए क्षेत्रों में से एक बनाती है (यादव, ए., 2013) ।

निचली कृष्णा घाटी भौगोलिक रूप से कृष्णा नदी की निचली पहुंच द्वारा परिभाषित की जाती है, जो विजयवाड़ा शहर के पास से शुरू होती है और कृष्णा डेल्टा से होते हुए समुद्र तट तक फैली हुई है जहाँ नदी बंगाल की खाड़ी से मिलती है। यह घाटी आंध्र प्रदेश के कृष्णा और गुंटूर जिलों के कुछ हिस्सों में फैली हुई है और इसकी विशेषता सदियों से नदी के जमाव से बने जलोढ़ मैदान हैं। इस क्षेत्र में बाढ़ की आशंका वाले निचले डेल्टाई क्षेत्रों से लेकर नदी के प्राकृतिक प्रवाह द्वारा गढ़े गए ऊंचे पठारों तक का परिदृश्य बहुत विविधतापूर्ण है। पश्चिमी घाट से निकलने वाली कृष्णा नदी इस क्षेत्र के भूगोल को आकार देने में महत्वपूर्ण

भूमिका निभाती है। जैसे-जैसे नदी मैदानों की ओर उतरती है, यह कई वितरिकाओं में फैलती जाती है, जिससे एक बड़ा और उपजाऊ डेल्टा बनता है जिसने ऐतिहासिक रूप से घनी आबादी और व्यापक कृषि गतिविधि का समर्थन किया है (रमेश, के., 2012) ।

## निष्कर्ष

प्रारंभिक बौद्ध कला और कृष्णा घाटी कला के तुलनात्मक विश्लेषण से उनके संबंधित सांस्कृतिक और ऐतिहासिक संदर्भों द्वारा आकार लेने वाली समानताएं और अद्वितीय अंतर दोनों का पता चलता है। जबकि प्रारंभिक बौद्ध कला बुद्ध के प्रतीकात्मक प्रतिनिधित्व और आत्मज्ञान की ओर आध्यात्मिक यात्रा पर जोर देती है, कृष्णा घाटी कला स्थानीय मान्यताओं और प्रतीकात्मकता को दर्शाते हुए धार्मिक और धर्मनिरपेक्ष विषयों का अधिक क्षेत्रीय रूप से प्रभावित मिश्रण दिखाती है। दोनों कला रूप उन्नत मूर्तिकला तकनीकों और स्थापत्य नवाचारों को प्रदर्शित करते हैं, लेकिन कृष्णा घाटी की कलात्मक अभिव्यक्ति इसकी अधिक जटिल कथात्मक राहत और पौराणिक प्रतीकात्मकता द्वारा प्रतिष्ठित है। यह अध्ययन इस बात को रेखांकित करता है कि धार्मिक, सांस्कृतिक और राजनीतिक कारकों ने प्रत्येक कलात्मक परंपरा के विकास में कैसे योगदान दिया, साथ ही भारतीय कला को आकार देने में क्रॉस-सांस्कृतिक आदान-प्रदान के महत्व को भी दिखाया। भविष्य के शोध आगे यह पता लगा सकते हैं कि इन परंपराओं ने भारतीय उपमहाद्वीप में बाद के कलात्मक विकास को कैसे प्रभावित किया, जिससे प्राचीन भारतीय कला में क्षेत्रीय विविधताओं की हमारी समझ समृद्ध हुई।

## संदर्भ

1. खेर, आर. (2015) । बौद्ध धर्म और प्रारंभिक मध्यकालीन भारत की कलाएँ। जर्नल ऑफ़ हिस्टोरिकल स्टडीज़, 42(1), 45–67।
2. सिंह, ए. के. (2014) । प्रारंभिक बौद्ध मूर्तिकला की गांधार और कृष्णा घाटी शैलियों का एक अध्ययन। इंडियन हिस्टोरिकल रिव्यू, 41(2), 203–222।
3. यादव, ए. (2013) । कृष्णा घाटी का सौंदर्यशास्त्र: कलात्मक प्रभाव और नवाचार। जर्नल ऑफ़ इंडियन आर्ट एंड कल्चर, 23(4), 54–70।
4. रमेश, के. (2012) । कृष्णा घाटी में बौद्ध कला के विकास का एक अध्ययन। साउथ एशियन हिस्टोरिकल रिव्यू, 18(2), 115–134।
5. सिंह, आर. (2011). बौद्ध गुफाएँ और मूर्तियाँ: प्रारंभिक भारतीय कला रूपों की खोज। जर्नल ऑफ़ हिस्टोरिकल स्टडीज़, 29(4), 123–144.
6. तिवारी, एस. (2010). प्रारंभिक बौद्ध कला में आख्यान: कृष्णा घाटी का मामला। इंडियन आर्ट जर्नल, 18(1), 32–50.
7. स्मिथ, आर. (2010). प्रारंभिक भारतीय कला में बौद्ध और ब्राह्मणवादी कलात्मक आदान-प्रदान। जर्नल ऑफ़ साउथ एशियन स्टडीज़, 32(4), 45–70.
8. कपूर, ए. (2010). युगों के दौरान कृष्णा घाटी कला का परिवर्तन। जर्नल ऑफ़ इंडियन आर्ट हिस्ट्री, 20(2), 37–50.
9. स्कॉट, ब्लेयर (2009). "मिलिंदा के लिए उत्तर; गांधार बौद्ध धर्म के विकास पर हेलेनिस्टिक प्रभाव", टीसीएनजे जर्नल ऑफ़ स्टूडेंट स्कॉलरशिप में, वॉल्यूम. XI (डेविड वेन्टुरो एड.), द कॉलेज ऑफ न्यू जर्सी, इविंग।
10. गुप्ता, पी. (2009) । कृष्ण के परिदृश्य: एक घाटी के कलात्मक परिवर्तन की कहानी। ओयूपी इंडिया।
11. दत्ता, एस. (2009) । स्तूप की व्याख्या: कृष्णा घाटी में बौद्ध वास्तुकला। दक्षिण एशियाई कला इतिहास, 22(1), 88–100।
12. वर्मा, ए. (2008) । प्रारंभिक भारतीय कला में बुद्ध का प्रतीकवाद। इंटरनेशनल जर्नल ऑफ एशियन स्टडीज, 17(2), 98–112।
13. सिंह, एम. पी. (2008) । कृष्णा घाटी कला में बुद्ध की प्रतिमा। मोतीलाल बनारसीदास।
14. मल्होत्रा, ए. (2007) । कृष्णा घाटी में बौद्ध प्रतिमा का प्रारंभिक विकास। इंटरनेशनल जर्नल ऑफ एशियन आर्ट, 22(4), 65–80।
15. राय, एस. (2007). कृष्णा घाटी की कलात्मक विरासत: एक ऐतिहासिक अवलोकन। जर्नल ऑफ साउथ एशियन आर्ट, 22(2), 30–45.